09 भाषा शिक्षण में मेरे प्रयोग : प्रोजैक्ट विधि से अँग्रेजी पढ़ाना

निवेदिता बेदादुर

छठी कक्षा में मेरे पहले दिन तीस आतुर चेहरों से मेरा पाला पड़ा। बस फिर क्या था वे और भी बेलगाम हो गए और चिल्लाकर–चिल्लाकर मेरी डेस्क के चारों ओर हुड़दंग मचाने लगे, मिस, मिस, मिस! क्या हम अपनी किताबें अपने बस्ते में से बाहर निकाल लें? आज आप कौन–सा पाठ पढ़ाने वाली हैं? हमारी टीचर कहाँ हैं? क्या आप हमें अँग्रेजी पढ़ाएँगी? आरहन अपनी स्पेलिंग नहीं सीखता। सीमा को डिक्टेशन में अच्छे नम्बर नहीं आते। क्या हमें रोज डिक्टेशन देकर पढ़ाया जाएगा? अतुल अपने सवाल जवाब कण्ठस्थ याद कर लेता है।

मैं यहाँ क्यों कर हूँ? मैं हैरत से सोचने लगी। मैं बारहवीं कक्षा में क्यों नहीं हूँ जहाँ मैं प्रभावोत्पादक लेखन या पत्रलेखन की विभिन्न शैलियों पर चर्चा कर रही होती? इस शैतान टोली से भला कैसे निपटूँगी? वे तो अपनी जगह टिककर बैठे भी नहीं रह सकते थे। क्या मैं चिल्लाकर इन्हें शान्त करूँ, इन्हें डराऊँ? मुझे क्या करना चाहिए? उधर बच्चों का शोर बढ़ता जा रहा था और इधर अनिर्णय की इस मनस्थिति में, अचानक मुझे एक तरकीब सूझी। मैं बोली, "चलो, स्कूल के लॉन में उस बोधिवृक्ष के नीचे चलकर बैठें। तुम लोग मेरी सेना मैं तुम्हारी सेनाध्यक्ष। चलो, पूरे अनुशासन में सीढ़ियाँ उतरें।" बच्चों को आइडिया पसन्द आया। उनके लिए शब्दों के हिज्जे सीखने से तो नया कुछ करना बेहतर था। इधर वे मेरे पीछे चल रहे थे उधर मेरे दिमाग में कुछ योजना खदबदा रही थी। हम लोग बोधिवृक्ष के नीचे जा विराजे और बच्चों की चटरपटर जब कुछ धीमी पड़ी तो मैंने उनसे कहा हम लोग पाठ्य–पुस्तक की पूरी पढ़ाई, प्रोजैक्ट्स के जरिए करेंगे। पुस्तक का हर पाठ एक प्रोजैक्ट होगा और सारे प्रोजैक्ट एक–दूसरे से अलग होंगे। तिस पर बहुत पूछताछ हुई – सवाल–जवाब को लेकर, अर्थ समझने को लेकर, हिज्जों और डिक्टेशन के सम्बन्ध में। हमने तय किया कि हम यह सब करेंगे लेकिन पहले हम अपने प्रोजैक्ट्स पूरे करेंगे।

पहला प्रोजैक्ट

पहला प्रोजैक्ट क्या था? पहला पाठ था कोलम्बस और अमेरिका की खोज। हमने इस पर एक नाटक करने का निर्णय लिया। सो हमने समूह बनाए। एक समूह ने पोस्टर बनाए, दूसरे समूह ने मंच सामग्री बनाई, तीसरे समूह ने संवादों को कथावस्तु से जोड़ा और अन्तिम चौथे समूह ने वेशभूषा व साजसज्जा का काम सम्भाला। उस समय लोग क्या पहनते थे? वे क्या खाते थे? उस समय का जहाज कैसा दिखता था? अपने खोजी अभियान के लिए वे लोग अपने साथ क्या–क्या चीजें ले जाया करते थे? ऐसे कई सवाल हमें परेशान किए दे रहे थे। हम लोग पुस्तकालय गए और इनमें से कुछ सवालों के जवाब ढूँढ़ लाए। हमने किताबें छान–छानकर चित्र बनाए और संवाद लिखे। अतुल रुआँसा हो गया था क्योंकि वह कोलम्बस बनना चाहता था। पोस्टर पसन्द न आने पर वीणा उन्हें बनाने वाले समूह से लड़ पड़ी थी। मुझे मध्यस्थता करनी पड़ी, बच्चों को शान्त कराना पड़ा और नियम बनाने पड़े लेकिन कुल मिलाकर हम लोगों को मजा बहुत आया। इसके बाद हमने एक छोटा सा प्रहसन किया। कहीं हम लड़खड़ाए, तो कहीं हमारी साँसें ऊपर–नीचे हुईं, और कभी हम हड़बड़ी में अपने लिखे हुए संवाद देखने लग जाते; इस तरह हमने सीखा और वल्लाह क्या सीखा!

बाद वाले प्रोजैक्ट फिर खटाखट हो चले

एक पाठ जैविक विकास पर था। उन दिनों एलसीडी प्रोजैक्टर नहीं होते थे। हमारे पास एक ओवरहेड प्रोजैक्टर था सो उसके लिए हमने जैविक विकास के विभिन्न चरणों पर ट्रांसपरंसियाँ बनाईं और एक सेमिनार का आयोजन

किया। प्रत्येक समूह ने जैविक विकास के किसी एक चरण पर अपना प्रेजेण्टेशन दिया। मुझे नहीं लगता कि आज के इस कट–कॉपी–पेस्ट युग में यूनिवर्सिटी के विद्यार्थी भी इससे बेहतर प्रेजेण्टेशन बना सकते हैं। निश्चित ही हमें मुश्किल सवालों का सामना करना पड़ा – सामग्री कहाँ से लाएँगे, चित्र और सीधी सरल व्याख्याएँ कहाँ से मिलेंगी? ऐसे में हमारी योजना में पुस्तकालाध्यक्ष को भी शामिल करना जरूरी था। वे बड़े दयालु निकले। अगले प्रोजैक्ट और हम किताबी कीड़ों के अगले आगमन की सूचना उन्हें पहले से ही दे दी जाती। बस फिर क्या था, हर बार वे अपनी तमाम किताबों से सारी सम्भावित जानकारी बटोरकर हमारे आगामी धावे के लिए तैयार मिलते। जैसे–जैसे साल बीतते गए, मुझे कम्प्यूटर लैब का अतिरिक्त प्रभार दे दिया गया, हम लोगों ने पॉवरपॉइण्ट पर अपना हाथ साधना शुरू कर दिया और डेण्टल हेल्थ से मेण्टल हेल्थ तक फैले तमाम विषयों पर स्लाइडें बना–बनाकर इस विधि की तमाम सम्भावनाएँ खंगाल लीं। यहाँ तक आते–आते मैं और बच्चे अपनी इस खोज–यात्रा के सहयात्री बन चुके थे।

अपनी खोजयात्रा के हम सहयात्री

अगले पाठ का हम क्या करें? अगला पाठ है किस विषय पर? सेहत और साफ–सफाई। चलो, एक पार्टी करते हैं! इसमें एक सलाद शो का आयोजन करते हैं! इसके चलते चर्चा चल पड़ी – समूह–निर्माण, किस प्रकार के सलाद हम ला सकते थे, खाद्यपदार्थ और कैलोरी, स्वास्थ्यकर खाना और जंक फूड। सो बच्चों ने समूह बनाए, सामान की लिस्ट बनाई, अपने घरवालों से सलाह–मशविरा किया, फिर वे सारा सामान लेकर आए, पाक विधियों पर चर्चा की और उन्हें दर्ज किया, फिर उन्हें अन्तिम रूप देकर उनका परीक्षण किया, उन्हें बदल–बदलकर स्थिर किया, उन्हें चखा, फिर इसके बाद उनके रेसिपी चार्ट बनाए, उनके ऊर्जा–मूल्य (कैलोरिफिक वैल्यू) लिखे और अन्त में सभी अध्यापकों के लिए एक 'सलाद शो' किया ताकि वे स्वाद लें और मजें करें। अध्यापकों ने उस दिन छककर खाया और सुनते हैं कि वह दिन सभी कक्षाओं के लिए बड़ा मजेदार रहा!

सारा जहाँ हमारा

ऐसा भी समय आया जब हमने सर्वे किए – अध्यापकों की भोजन–सम्बन्धी आदतें, धूम्रपान करने वाले अभिभावकों का सर्वे, टीवी दर्शन का सर्वे, पौधे–प्रेमियों का सर्वे। पाई चार्ट और बार ग्राफ्स के द्वारा हमने इन सर्वेक्षणों के परिणाम दर्शाए। संक्षिप्त रिपोर्टें बनाकर हमने उन्हें वितरित किया। स्कूल पत्रिका में इन रिपोर्टों को छापकर हमने धूम्रपान, खाने की खराब आदतों और बेमतलब टीवी देखने के कुप्रभावों जैसे मुद्दों के प्रति जागरूकता बढ़ाने का प्रयास किया।

समस्या और समाधान

हमने हर प्रकार की समस्या पर गौर करना शुरू किया और अखबारों में सम्पादक के नाम पत्र लिखकर उन्हें हल करने की कोशिश की। हमारे स्कूल के आजू–बाजू में दो झुग्गी बस्तियाँ थीं और जब भी स्कूल प्रशासन, स्कूल परिसर के चारों तरफ एक दीवार खड़ी करने लगता, आधी रात के वक्त आसपास के झुग्गीवासी आकर उसे तोड़ देते, कारण कि दीवार बन जाने के चलते उन दोनों झुग्गी बस्तियों के बीच के आवागमन में बाधा पहुँचती। इसके अलावा, हमारे स्कूल के मैदान के दूर वाले हिस्से का इस्तेमाल, झुग्गीवासी शौचालय के बतौर करने लगे थे। तिस पर हमने इन सब स्थितियों का हवाला देते हुए इण्डियन एक्सप्रेस के सम्पादक के नाम पत्र लिखे। एक छात्रा एक्सप्रेस कार्यालय के पास ही रहती थी, सो उसने उन पत्रों को एक्सप्रेस के कार्यालय तक पहुँचाने का बीड़ा उठाया। सम्पादक ने

जब सातवीं कक्षा के विद्यार्थियों (अब तक हम छठी कक्षा से सातवीं कक्षा में आ गए थे) के द्वारा लिखे गए पत्रों का इतना बड़ा जखीरा देखा तो वे भी स्तब्ध रह गए। फलस्वरूप उन्होंने उनमें से कुछ पत्र चुनकर, सेंध लगी दीवार के चित्रों सहित अपने अखबार में छाप दिए। बस फिर क्या था, कुछ ही दिनों में झुग्गी बस्ती में शौचालय बन गए। झुग्गीवासियों के आने–जाने का रास्ता छोड़ते हुए, स्कूल के प्रांगण की दीवार की भी मरम्मत कर दी गई। बस्ती के बच्चों को तो एक प्रकार से स्कूल के मैदान में क्रिकेट खेलने का एक खुला न्यौता ही मिल गया। कुछ काम पार्षद द्वारा सम्पन्न हुए, कुछ सेना की उस इकाई द्वारा जिनके बच्चे हमारे स्कूल में पढ़ते थे और कुछ काम दोस्तों ने कर दिए। और इन सारे कामों की प्रेरणास्रोत थी रॉबर्ट फ्रॉस्ट की एक कविता!

बच्चों को सक्रिय होकर जीवन के कुछ अनुभव हासिल करने चाहिए ताकि वे शिक्षित हों!

सवाल यह था कि इस सबसे मेरे बच्चे अँग्रेजी सीख रहे थे क्या? इसके नतीजतन, क्या उनके हिज्जे दुरुस्त हो रहे थे? क्या वे सवाल–जवाब लिख रहे थे? क्या वे निबन्ध व पत्र लिख रहे थे? इसका जवाब 'हाँ' और 'न', दोनों ही था। हम यह तो जानते थे कि हमें ये सारे अभ्यास तो करने ही पड़ेंगे क्योंकि यह सब परीक्षा में पूछा जाने वाला है। सो हमने एक बीच का रास्ता निकाला – परीक्षा में आने वाले ऐसे सारे सवाल हम कभी अपने किसी प्रोजैक्ट के बीच में करेंगे या फिर कुछ आगे चलकर। लेकिन अब मैं सोचती हूँ कि हिज्जे श्रुतलेखन (स्पेलिंग डिक्टेशन) से क्या मेरे बच्चे कुछ सीख पाए, या फिर वास्तविक पात्रों को लेकर वास्तविक लोगों के लिए रिपोर्ट या पत्र लिखने के जरिए ही वे अपने हिज्जे भी सीखते चले? ऐसे में पाठ खत्म होने के बाद नियमित रूप से हम अपने बच्चों से जो सवाल–जवाब लिखने को कहते हैं उस सबका भला क्या मतलब है? अपने विचार व्यक्त करने, नाटिकाओं के लिए कथानक, संवाद व पोस्टर जैसी मौलिक रचनाएँ करने तथा सर्वेक्षणों के लिए उपयुक्त प्रश्न लिखने व सेहत और साफ–सफाई के नुस्खे लिखने जैसे अभ्यास क्या बेहतर नहीं होते? फिर चाहे वह समूह में ही क्यों न किए गए हों, लेखन की एक छोटी–सी मौलिक कृति में भी मूल पाठ की सीमाओं से पार चले जाने की सम्भावनाएँ होती हैं। हम पाठ/इबारत को पूरा करते हुए महज लिपिबद्ध ही नहीं करते हम उसका खुलासा करते हुए उसकी व्याख्या करते हैं! हम उसका पुनरुद्धार करते हुए उसे ताजा बनाते हैं। और हमारा यह सारा उद्यम कहीं निर्वात में नहीं होता बल्कि अन्य कक्षाओं में होने वाली घटनाओं से उसका कुछ नाता जरूर बनता है। स्वास्थ्य और स्वच्छता कोई निरे प्रसंग या लेख नहीं जिन्हें हम श्रुतलेखन के द्वारा लिपिबद्ध करते हैं। बल्कि यह सारा उद्यम एक जीती–जागती रचना है जिसका सम्बन्ध, विज्ञान की कक्षा में शिक्षक द्वारा दिए गए व्याख्यान, अखबारों में लिखी खबरों और टीवी पर हमारे द्वारा सुनी गई बातों से है।

मेरे बच्चे क्या सीख रहे थे? वे परस्पर–सहयोग के द्वारा काम करने, तरह–तरह की क्षमताओं को स्थान व सम्मान देने, किसी मुद्दे पर तर्क–वितर्क करने, रिपोर्ट, विवरण लिखने, जानकारी खोजने और इस जानकारी को विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करने जैसे कौशल सीख रहे थे। मैंने सोचा, ये सारे कौशल क्या अन्य विषयों के लिए भी उपयोगी हो सकते हैं। फिर एक दिन मेरी सहकर्मी ने मुझसे पूछा, "ये तुम बच्चों को भला क्या सिखा रही हो? तिस पर घबराकर

मैंने पूछा, "वे क्या एकदम बेलगाम हो गए हैं?" बात यह थी कि इसके पहले कई शिक्षक मेरी कक्षा में मचने वाले हल्ले की शिकायत करते आए थे। मेरी प्राचार्य भी मुझसे पूछ चुकी थीं कि मेरी कक्षा में यह सब क्या होता है, और मैं उन्हें अपनी सफाई दे चुकी थी। लेकिन मेरी इस सफाई से वे बिलकुल भी आश्वस्त होती न लगीं और उन्होंने बड़ी सख्ती से मुझसे कहा कि इन बच्चों के अभिभावकों की नाराजगी का सामना करने के लिए मैं तैयार हो जाऊँ। लेकिन रजनी ने तो मुझे एक सुखद आश्चर्य में डाल दिया था। "नहीं, वे अराजक तो नहीं हुए हैं, लेकिन तुम उन्हें साँख्यिकी क्यों पढ़ा रही हो?" लेकिन मैं तो ऐसा कुछ भी नहीं कर रही थी। मैं तो बस सर्वेक्षणों का विश्लेषण करते हुए उन्हें चित्रात्मक रूप से प्रस्तुत कर रही थी और बच्चों को आँकड़ों का तुलनात्मक विश्लेषण कर उन्हें ग्राफ पर अंकित करना सिखा रही थी। रजनी को इससे अपनी साँख्यिकी की कक्षा में पढ़ाने में बड़ी मदद मिली लगती थी।

बस फिर क्या था, अगले कुछ दिनों के लिए लंच के दौरान हमने अपने इन नन्हे बन्दरों को स्कूल के प्रांगण की दीवार पर बैठा दिया और उनसे पर्यावरण को प्रदूषित करने वाले भारी व छोटे वाहनों की गिनती करने के लिए कहा ताकि कक्षा में हम प्रदूषण के कुप्रभावों पर बात कर सकें। रजनी और मैंने तय किया कि जब भी सम्भव होगा हम विज्ञान और भाषा की कक्षा को एक साथ जोड़ेंगे। बच्चों के साथ हुई हमारी इन चर्चाओं के फलस्वरूप बच्चों ने आँकड़ों के साथ अपनी रिपोर्टें बनाईं। इसके चलते, हमारे बच्चों ने एक ठोस व प्रामाणिक दलील पेश करने की काबिलियत आ गई थी। इस दौरान, बच्चों ने भाषा के अभ्यास के साथ–साथ अवलोकन करने, आँकड़े जुटाने, विश्लेषण करने प्रमाण खोजने, उसे दर्ज करने और अन्ततः अपनी प्रामाणिक दलील प्रस्तुत करने जैसे वैज्ञानिक कौशल भी सहज ही हासिल किए।

मैं अक्सर सोचा करती कि क्या हम अपने बच्चों को अँग्रेजी महज एक विषय के बतौर पढ़ाते हैं या फिर इसके जरिए हम उन्हें अपने बूते कुछ सोच पाने का कौशल भी सिखा रहे होते हैं? भाषा की कक्षा में पाठ्य–पुस्तक पढ़ाना क्या इतना जरूरी होता है? आखिर मैं क्या पढ़ा रही थी? एक पाठ्य–पुस्तक या फिर भाषा–कौशल, एक अध्याय या फिर सोचने का कौशल? पाठ्य–पुस्तक की सीमाओं में मेरा दम घुटता लगता था। मैं अपने बच्चों को उड़ते हुए देखना चाहती थी और यह उड़ान मैं उन्हें खुद अपने बल पर पाते हुए देखना चाहती थी। पाठ्य–पुस्तक के किसी अध्याय का बच्चे की दुनिया से कुछ रिश्ता बनता भी है या नहीं? क्या कोई अध्याय बच्चे को अपने खेल के मैदान के बारे में सोचने की फुर्सत देता है? क्या किसी अध्याय के चलते बच्चे को विज्ञान, गणित व भूगोल सीखने में मदद मिली है? क्या अध्यायों का रिश्ता बच्चों की पसन्द–नापसन्द, उनके शौक और उनके मित्रों से बनता है? क्या वाकई कुछ हिज्जे, कुछ सवालों के जवाब, शब्द–निर्माण या व्याकरण पर कुछ अभ्यास हमारा विचार–कौशल, या केवल भाषा कौशल ही सही, बढ़ाते हैं? दरअसल भाषा कौशल होता क्या है? क्या कुछ नियमों के जमावड़े को हम भाषा कौशल का नाम दे सकते हैं? या फिर उनका सम्बन्ध सही शब्द, सही जुमला चुनने और हमारे विचारों को एकदम सही और सटीक ढंग से लिखने, किसी खास मौके पर मौजूद एक खास तरह के समूह को क्या और कैसे बोलने के ज्ञान से होता है? अब यदि मेरे विद्यार्थियों के लिए इन कौशलों को अर्जित करना जरूरी है तो क्या स्कूल के भीतर और स्कूल के बाहर उनके जीवन से जुड़ीं रचनात्मक गतिविधियाँ हमारे इस मकसद को बेहतर ढंग से पूरा नहीं करतीं?

इस सोच के मद्देनजर पाठ्य–पुस्तक मुझे एक ऐसा सहायक लगी जिसके जरिए अध्यापक अपने विद्यार्थियों की सोच को प्रेरित कर सकता है, शब्द–भण्डार व पढ़ने और लिखने का कौशल बढ़ाने सम्बन्धी मार्गदर्शन दे सकता है। शिक्षक का काम है अपने विद्यार्थियों में सोचने–विचारने का सहज कौशल विकसित करना, अपने विचारों को संगठित करते हुए व्यक्त करने का कौशल विकसित करना, अपनी दलील को सुगठित कर पाने का कौशल विकसित करना, किसी लेख या रिपोर्ट की रूपरेखा के बारे में सोचकर

लक्षित पाठकवर्ग, उद्देश्य और विषयवस्तु के अनुसार अपने विचारों को स्पष्ट और सटीक रूप से व्यक्त कर पाने का कौशल विकसित करना। भाषा–शिक्षक अन्य विषयों से कटकर अपना काम नहीं कर सकते। देखा जाए तो विषय कोई भी हो – गणित, विज्ञान या भूगोल – भाषा ही सब विचारों की जननी होती है। ऐसे में विद्यार्थियों को सोचने की शक्ति के साथ लैस करना क्या भाषा शिक्षक का कर्तव्य नहीं बनता? और यदि ऐसा है तो फिर भाषा को सक्रिय होकर ऐसी चीजें करनी होंगी जिनका नाता बच्चे की दुनिया, उसकी मुश्किलों, अन्य विषयों सम्बन्धी उसके ज्ञानार्जन से बनता है। लेकिन ऐसा तभी होगा जब हम पाठ को एक ऐसे तैराकीबोर्ड के बतौर बरतेंगे जिससे उछलकर हम जीवन सागर में एक डुबकी लगा सकते हों!

निवेदिता *वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के विश्वविद्यालय संसाधन केन्द्र में एकेडमी एण्ड पैडॉगॉजी विशेषज्ञ के बतौर काम कर रही हैं। भाषिक ज्ञानार्जन में मोबाइल फोन के इस्तेमाल पर अनुसन्धान में उनकी रुचि रही है और एस.एम.एस. के द्वारा भाषा ज्ञान विषय पर उन्होंने कुछ प्रयोग भी किए हैं, और इस पर उनका शोध अध्ययन ब्रिटिश काउंसिल द्वारा प्रकाशित कण्टीन्यूइंग प्रोफेशनल डेवलप्मेण्ट – लेसन्स फ्रॉम इण्डिया नामक पुस्तक में शामिल है। भारत व भारत के बाहर, केन्द्रीय विद्यालयों में माध्यमिक व उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अँग्रेजी पढ़ाने का उनका 29 वर्षीय अनुभव है। अपने अब तक के कॅरिअर में वे केन्द्रीय विद्यालयों और एक निजी सी.बी.एस.ई. स्कूल में उप–प्राचार्य व प्राचार्य के पद पर भी कार्य कर चुकी हैं। केन्द्रीय विद्यालय, काठमाण्डू में अध्यापन के दौरान उन्हें 'शिक्षक प्रोत्साहन पुरस्कार' भी मिल चुका है। उनसे* nivedita@azimpremjifoundation.org *पर सम्पर्क किया जा सकता है।* ***अनुवाद*** *: मनोहर नोतानी*